ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-6* Issue-10*November- 2021
Innovation The Research Concept

# नैतिक अन्तःप्रज्ञावाद के प्रमुख प्रकारों की समीक्षा

# A Critique of Main Types of Ethical Intuitionism

**Paper Submission: 10/11/2021, Date of Acceptance: 23/11/2021, Date of Publication: 24/11//2021**

**नेदा परवीन**
शोध-छात्रा,
दर्शनशास्त्र विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
प्रयागराज, उत्तर प्रदेश, भारत

## सारांश

अपरोक्ष वस्तुओं के ज्ञान के संदर्भ में अन्तःप्रज्ञा की भूमिका महत्वपूर्ण है। इसे ज्ञान के तात्कालिक एवं साक्षात् बोध के रूप में माना जाता है। परंतु इस शक्ति का वास्तविक स्वरूप क्या है, इसको लेकर विभिन्न चिन्तकों में विवाद है। कुछ चिंतकों ने इसके स्वरूप को 'बौद्धिक' माना तो कुछ ने 'भावनात्मक'। इसके अलावा कुछ चिंतकों ने इसे इन दोनों से पृथक 'अन्तर्विवेक' की शक्ति माना। प्रस्तुत शोध-पत्र का मुख्य ध्येय नैतिक अन्तःप्रज्ञावाद के प्रमुख प्रकारों की समीक्षा करना है ताकि इनमें से अधिक सुसंगत सिद्धांत की खोज हो सके। इस शोध-पत्र की प्रासंगिकता यह है कि प्रमुख प्रकारों की समीक्षा से अन्तःप्रज्ञावाद का स्वरूप भी स्पष्ट होगा। इस उद्देश्य से सर्वप्रथम भूमिका में अन्तःप्रज्ञा एवं नैतिक अन्तःप्रज्ञा के स्वरूप पर विचार किया जाएगा। द्वितीय खंड में नैतिक अन्तःप्रज्ञावाद के स्वरूप पर विचार किया जाएगा। तृतीय खंड में इसके प्रमुख प्रकारों की विवेचना की जाएगी। चतुर्थ खंड में इस सिद्धांत के विरुद्ध की गई आपत्तियों पर विचार करते हुए अंततः निष्कर्ष की स्थापना की जाएगी।

In the context of knowledge of indirect objects, the role of intuition is important. It is considered as the immediate and immediate realization of knowledge. But there is a dispute among different thinkers about what is the real nature of this power. Some thinkers considered its nature as 'intellectual' and some as 'emotional'. Apart from this, some thinkers considered it the power of 'introspection' separate from these two. The main goal of the present paper is to review the major types of ethical intuitionism in order to discover the most relevant of these. The relevance of this paper is that a review of the major types will also clarify the nature of intuitionism. For this purpose, the nature of intuition and moral intuition will be considered in the first role. The nature of moral intuitionism will be considered in the second section. Its main types will be discussed in the third section. In the fourth section the conclusion shall be established by considering the objections raised against this principle. The nature of moral intuitionism will be considered in the second section. Its main types will be discussed in the third section. In the fourth section the conclusion shall be established by considering the objections raised against this principle.

**मुख्य शब्दः** नैतिक अन्तःप्रज्ञावाद, नैतिक कथन, बौद्धिक अन्तःप्रज्ञावाद, नैतिक इन्द्रियवाद, अन्तर्विवेक।

**Key Words**: Moral Intuitionism, Moral Statement, Intellectual Intuitionism, Moral Sensism, Intuition.

**प्रस्तावना**

अन्तःप्रज्ञा एक आंतरिक एवं सहज-शक्ति है जिसके द्वारा हमें उन विषयों का ज्ञान होता है जिनका ज्ञान ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से असंभव है। सामान्य अर्थ में अन्तःप्रज्ञा का अर्थ *साक्षात्* या *तत्काल* बोध है। साक्षात् या तत्काल बोध का अर्थ है किसी वस्तु या तथ्य का ज्ञान इस प्रकार प्राप्त होना कि उसके संदर्भ में विचार करने या तर्क प्रस्तुत करने का समय या आवश्यकता न हो। दूसरे शब्दों में कहें तो अन्तःप्रज्ञा ऐसी शक्ति है जो किसी वस्तु का बोध तात्कालिक रूप में करवाती है।

प्रत्येक व्यक्ति समाज का अंश होता है। समाज में रहकर ही वह कर्म करता है। हमारे प्रत्येक कर्मों का समाज के अन्य लोग नैतिक मूल्यायन करते हैं तथा उसकी सराहना यह निंदा कर उसके औचित्य-अनौचित्य का निर्णय करते हैं। यदि हम सत्य वचन बोलते हैं या विषम परिस्थिति में अपने मित्र का सहयोग नहीं करते हैं तो अन्य लोग हमारे इन कर्मों का नैतिक मूल्यायन अवश्य करेंगे। प्रश्न उठता है कि इस मूल्यायन का आधार क्या है? कुछ लोग कहेंगे कि जिस कर्म से सुख की प्राप्ति हो वह कर्म अच्छा कहा जाएगा। कुछ लोग कहेंगे कि जिस कर्म से चरित्र का कल्याण हो या विकास हो वह कर्म अच्छा कहा जाएगा। इनमें से कुछ लोगों का यह भी कहना होगा कि हमारे कर्मों के मूल्यायन का आधार हम स्वयं हैं। अतः हमारी अंतश्चेतना के द्वारा हम प्रत्यक्षतः जान लेते हैं कि कौन सा कर्म अच्छा और कौन सा कर्म बुरा

है। स्पष्ट है की जब अन्तःप्रज्ञा की चर्चा कर्मों एवं आचरणों के नैतिक मूल्य के संदर्भ में की जाती है तो वह चर्चा नीतिशास्त्र के अंतर्गत की जाती है
इस प्रकार स्पष्ट है कि किसी वस्तु के तात्कालिक एवं साक्षात् बोध के साधन के रूप में अन्तःप्रज्ञा महत्वपूर्ण है। नैतिक अन्तःप्रज्ञावाद के विभिन्न प्रकारों की चर्चा करने से पूर्व नैतिक अन्तःप्रज्ञावाद के सामान्य स्वरूप की विवेचना करना प्रासंगिक होगा जिससे अन्तःप्रज्ञा' प्रकारों की समझ बोधगम्य हो।

**अध्ययन का उद्देश्य**

प्रस्तुत शोध-पत्र का मुख्य उद्देश्य नैतिक अन्तःप्रज्ञावाद के प्रमुख प्रकारों की समीक्षा करना है साथ ही इस तथ्य की भी खोज करना है कि नैतिक सत्यों को जानने के सन्दर्भ में इन्में से अधिक उपयुक्त सिद्धान्त कौन सा है। इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु नैतिक अन्तःप्रज्ञावाद के प्रमुख प्रकारों यथा बौद्धिक अन्तःप्रज्ञावाद, नैतिक इन्द्रियवाद एवं अन्तर्विवेक सिद्धान्त की आलोचना की गई है।

**नैतिक अन्तःप्रज्ञावाद का स्वरूप**

इस शक्ति की चर्चा नीतिशास्त्र के अंतर्गत कर्मों एवं आचरणों के औचित्य-अनौचित्य के संदर्भ में सत्रहवीं शताब्दी में हुई जिसे 'नैतिक अन्तःप्रज्ञावाद' के नाम से जाना जाता है। इस शक्ति के समर्थकों का दावा है कि प्रत्येक व्यक्ति में सहज-शक्ति होती है जो उसे विभिन्न परिस्थितियों में सक्षम बनाती है कि वह आचरण संबंधी निर्णय दे सके तथा कर्मों के औचित्य-अनौचित्य को जान सके। नैतिक अन्तःप्रज्ञावादियों का मानना है कि कर्मों का उचित-अनुचित गुण कर्मों में ही विद्यमान है जिसका ज्ञान प्रत्येक व्यक्ति को अन्तःप्रज्ञा नामक शक्ति से होता है। इनके अनुसार नैतिक कथन स्वतःसिद्ध होते हैं तथा नैतिक गुण निर्प्राकृतिक गुण है।[1] इसके स्वरूप को स्पष्ट करते हुए कहा जाता है कि एक विशेष मानसिक शक्ति अन्तःप्रज्ञा के द्वारा कर्मों एवं कर्तव्यों के उचित-अनुचित का साक्षात् ज्ञान हो जाता है तथा इसके लिए किसी अनुमान या प्रमाण की आवश्यकता नहीं होती है। यह ऐसा सिद्धांत है जिसके अनुसार कर्मों के शुभ अशुभ का विधान-निर्माण या उसका निर्णय एकमात्र हमारी प्रतिभान शक्ति करती है। इस शक्ति की विशेषता यह है कि यह कर्मों के शुभत्व-अशुभत्व में भेद करती तथा अच्छाई के अनुसार कर्म करने को प्रेरित करती है और बुराई को करने से रोकती है। विभिन्न चिन्तकों ने इस शक्ति का समर्थन भिन्न-भिन्न ढंग से किया जिस कारण इसके विभिन्न प्रकार हो गए हैं। यहाँ हमारा उद्देश्य अन्तःप्रज्ञावाद के प्रमुख प्रकारों की समीक्षा करना है। अग्रिम खंड में हम नैतिक अन्तःप्रज्ञावाद के प्रमुख प्रकारों की चर्चा प्रारंभ करेंगे।

**नैतिक अन्तःप्रज्ञावाद के प्रमुख प्रकार**

उल्लेखनीय है कि भिन्न-भिन्न चिंतकों ने अन्तःप्रज्ञा के स्वरूप के विषय में भिन्न-भिन्न मत प्रस्तुत किए हैं और इस कारण अन्तःप्रज्ञावाद के कई प्रकार हो गए हैं। यद्यपि सभी चिंतक अन्तःप्रज्ञा को कर्मों के उचित-अनुचित का निर्णायक मानते हैं तथापि स्वरूप के विषय में वे एकमत नहीं है। अन्तःप्रज्ञा के विषय में कई विचारधाराएँ मौजूद हैं। कुछ चिंतक यह दावा करते हैं कि अन्तःप्रज्ञा का स्वरूप अनिवार्यता 'बौद्धिक' है। इसका अर्थ यह है कि यह चिन्तक अन्तःप्रज्ञा को व्यक्ति की बौद्धिक शक्ति मानते हैं। इनका मानना है कि बुद्धि ही वह तत्व है जिसके द्वारा हम विभिन्न कर्मों में भेद कर उसके औचित्य-अनौचित्य का निर्णय करते हैं। दूसरी ओर कुछ चिंतकों का मानना है कि जब हम किसी कर्म को उचित या अनुचित कहते हैं तो हम उसके संबंध में अपनी अनुमोदन या अननुमोदन की भावनाओं और संवेदनाओं को अभिव्यक्त करते हैं। इस सिद्धांत को मानने वाले चिंतक 'नैतिक इन्द्रिवादी' या 'संवृत्तिवादी' कहलाते है। वहीं कुछ अन्य चिंतक बुद्धि तथा भावना दोनों को समान महत्व देते हुए इन दोनों के संयोजन को महत्व देते हैं। इस सिद्धान्त को 'अन्तर्विवेक' के नाम से जाना जाता है। इन चिंतकों ने मनुष्य के अन्तर्विवेक को ही नैतिक आचरण का सर्वोच्च नियामक माना है। यों तो नैतिक अन्तःप्रज्ञावाद के कई अन्य रूप भी हैं परंतु वे सभी इन तीन रूपों के अन्तर्गत समाहित हो जाते हैं। नैतिक अन्तःप्रज्ञावाद के प्रमुख प्रकार इस प्रकार हैं-

**बौद्धिक अन्तःप्रज्ञावाद**

इस सिद्धान्त के अनुसार कर्मों के औचित-अनौचित्य का निर्धारण बुद्धि के आधार पर ही संभव है। यानी अन्तःप्रज्ञा का स्वरूप अनिवार्यता बौद्धिक है। यह शक्ति व्यक्ति की बौद्धिक क्षमता ही है। बौद्धिक अन्तःप्रज्ञावादियों का मानना है कि जब व्यक्ति मूल्य आधारित या कर्म एवं आचरण के उचित संबंधी निर्णय लेता है तो उस निर्णय में वास्तविक भूमिका बुद्धि की होती है। सर्वप्रथम राल्फ कडवर्थ ने बौद्धिक अन्तःप्रज्ञावाद का समर्थन किया। इनके अलावा रिचर्ड प्राइस, जॉन बैल्गुए एवं सैमुअल क्लार्क ने भी अन्तःप्रज्ञावाद का समर्थन बुद्धि के आधार पर किया।इन दार्शनिकों के अनुसार नैतिक निर्णयों एवं नैतिक सहमति-असहमति की व्याख्या करने के लिए नैतिक इन्द्रिय का सहारा लेना अनावश्यक है।[2] इन दार्शनिकों का मानना है कि जिस प्रकार गणित के प्रत्ययों को जानने के लिए बौद्धिक शक्ति की आवश्यकता होती है उसी प्रकार नैतिक प्रत्ययों की व्याख्या करने के लिए भी बौद्धिक शक्ति की आवश्यकता होती है। इस संदर्भ में कडवर्थ का मत है, "The abstract universal reason (rationes) are that higher

station of the mind from whence looking down upon individual things, it has a commanding view of them, and as it were *a priori* comprehends or known them."[3]। अर्थात् अमूर्त सार्वभौमिक कारण बुद्धि का उच्च स्थल है जो वस्तुओं को दूर से देखता है तथा उसके ऊपर व्यापक दृष्टि रखता है। इसका अर्थ यह है कि बुद्धि में वह शक्ति विद्यमान है कि वह वस्तुओं के ऊपर सार्वभौमिक दृष्टि रख उनका ज्ञान प्राप्त करती है। अतः बुद्धि से प्राप्त ज्ञान सत्य एवं वस्तुनिष्ठ होता है। बुद्धि के आधार पर अन्तःप्रज्ञावाद का समर्थन आधुनिक दार्शनिक जॉर्ज एडवर्ड मूर, हैराल्ड अर्थर प्रिचर्ड तथा विलियम डेविड रॉस ने भी किया। उल्लेखनीय है कि यह दार्शनिक बौद्धिक अन्तःप्रज्ञावाद का ही समर्थन करते हैं किंतु एक विशिष्ट अर्थ में। इन दार्शनिकों ने मुख्यतः नैतिक प्रत्ययों एवं शब्दों के ज्ञान के संदर्भ में अन्तःप्रज्ञात्मक शक्ति का समर्थन किया है। मूर उचित के संदर्भ में एकतत्ववाद के समर्थक थे जिसके अनुसार केवल एक मौलिक नैतिक सिद्धांत है जिसके आधार पर हम उचित-अनुचित का निर्धारण कर सकते हैं। वह परिणामवादी थे अर्थात् उनके अनुसार 'उचित' एवं 'कर्तव्य' का ज्ञान 'शुभ परिणाम' के आधार पर हो सकता है परंतु 'शुभ' का ज्ञान मात्र अन्तःप्रज्ञा के द्वारा हो सकता है। दूसरी ओर रॉस ये मानते थे कि मौलिक नैतिक सिद्धांत की बहुलता है इसलिए ऐसा कोई उच्च आदेशात्मक सिद्धांत नहीं है जिसके आधार पर मौलिक नैतिक सिद्धांतों के बीच संघर्ष को समाप्त किया जा सके। रॉस का मानना है कि नैतिक प्रत्यय गणित के प्रत्ययों के समान होते हैं तथा इनको प्रमाणित करने की आवश्यकता नहीं होती। उनके शब्दों में, "In both cases we are dealing with proposition that cannot be proved, but that just as certainly need no proof."[4]। अर्थात् दोनों स्थिति में हम उन तर्कवाक्यों की बात करते हैं जिन्हें प्रमाणित नहीं किया जा सकता। समकालीन युग में रॉबर्ट ऑडी एवं माइकल हेमर ने बौद्धिक अन्तःप्रज्ञावाद का समर्थन किया है। ऑडी ने मुख्य रूप से रॉस के सिद्धांतों का पुनर्निर्माण किया है। उल्लेखनीय है कि नैतिक अन्तःप्रज्ञावाद को मानकीय नैतिक सिद्धांतों और नैतिक ज्ञानमीमांसा का एक प्रकार जाता है। मानकीय नैतिक सिद्धांत मानता है कि प्रथम-दृष्टया नैतिक कर्तव्यों की बहुलता है। नैतिक ज्ञानमीमांसा के अनुसार कुछ निश्चित विश्वास स्वतःसिद्ध होते हैं, इस कारण किसी व्यक्ति की पर्याप्त समझ इन विश्वासों को स्वतःसिद्ध प्रमाणित करती है। इन तत्वों यथा मानकीय नैतिक सिद्धांत तथा नैतिक ज्ञानमीमांसा को रॉस ने स्वीकार किया था उसी प्रकार ऑडी ने भी इन तत्वों का संयोजन अपने सिद्धांत में किया। ऑडी के अनुसार जिन तर्कवाक्यों का ज्ञान हमें अन्तःप्रज्ञा के द्वारा होता है वह तर्कवाक्य साधारणतया गैर-अनुमानित होते हैं।[5]

**नैतिक इन्द्रियवाद**

इसी शताब्दी में कुछ अन्य चिंतकों ने नैतिक अन्तःप्रज्ञावाद को बुद्धि के स्थान पर भावनाओं पे आधारित माना है जिसे 'नैतिक इन्द्रियवाद' या 'संवृत्तिवाद' कहते हैं। इस सिद्धान्त के प्रमुख समर्थक शेफ्ट्सबरी है। उन्होंने माना है कि मनुष्य अन्य सभी प्राणियों से भिन्न है क्योंकि मनुष्य में प्राकृतिक रूप से नैतिक इन्द्रिय विद्यमान है जो कर्मों के उचित-अनुचित होने का ज्ञान करवाती है। इनके बाद फ्रांसिस हचिसन ने नैतिक इन्द्रियवाद को स्पष्ट एवं व्यवस्थित रूप दिया। हचिसन के अनुसार मनुष्य अपनी भावनाओं से प्रभावित होकर ही जान पाता है की क्या नैतिक दृष्टि से शुभ तथा क्या अशुभ है। उदाहरण के लिए, यदि हम किसी व्यक्ति की सहायता करते हैं तब हमें ज्ञान होता है कि यह कर्म हम किसी स्वार्थ या आत्मप्रेम से प्रभावित होकर नहीं बल्कि अपनी भावना से प्रेरित होकर किया गया है। स्पष्ट है कि हचिसन हॉब्स के प्रकृतिवाद का खंडन करते हैं। हचिसन ने नैतिक इन्द्रिय के विषय में कहा कि, नैतिक कर्मों की धारणा हम में विद्यमान है और यह धारणा जिस शक्ति के द्वारा प्राप्त होती है उसे नैतिक इन्द्रिय कहते हैं।[6] समकालीन युग में सोबिन रोज़र ने भावनाओं के आधार पर अन्तःप्रज्ञावाद का समर्थन किया है। रोज़र का मानना है कि नैतिक निर्णय केवल संज्ञानात्मक क्षमताओं से नहीं लिये जाते हैं। संज्ञानात्मक क्षमताओं से अधिक संवेदनशील क्षमताओं की आवश्यकता होती है। उन्होंने नैतिक निर्णय के लिए मनुष्य की भावना एवं संवेदना को बुद्धि से अधिक प्रभावशाली माना है। रोज़र अपने सिद्धांत को 'भावना का संज्ञानात्मक' सिद्धांत कहते हैं। रोज़र का मानना है कि भावनाओं में सहानुभूति की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका है क्योंकि नैतिक अनुभव सहानुभूति के माध्यम से होता है। सहानुभूति के अनुभव की क्षमता को हम नैतिक इन्द्रिय के रूप में हम समझ सकते हैं।[7]

**अन्तर्विवेक सिद्धांत**

उपरोक्त दोनों दोनों सिद्धांतों को एकांगी बताते हुए अठ्ठारवीं शताब्दी के दार्शनिक जोसेफ बटलर ने 'अन्तर्विवेक सिद्धांत' का प्रतिपादन किया। बटलर का मानना है कि मानव-स्वभाव के अनेक पक्ष है। उपरोक्त दोनों सिद्धांतों ने मनुष्य के विभिन्न पक्षों पर ध्यान नहीं दिया यही कारण है कि उनका सिद्धांत एकांगी रह गया। उल्लेखनीय है कि बटलर ने मनुष्य में चार तत्वों की कल्पना की है। प्रथम है विशिष्ट प्रवृत्तियाँ, जो विशेष समय पर विशेष कर्म के लिए प्रेरित करती हैं। इनका उद्देश्य क्षणिक एवं तात्कालिक होता है। जैसे, भूख, प्यास इत्यादि। द्वितीय एवं तृतीय तत्व है परोपकार और आत्मप्रेम। यह तत्व भी मनुष्य को अनेक प्रकार के इच्छित

कर्म के लिए प्रेरित करते हैं। परोपकार तथा आत्मप्रेम आपस में संबंधित है। पूर्ण आत्म संतुष्टि के लिए परोपकार एक अनिवार्य शर्त है तथा आत्मप्रेम समाज के प्रति उचित व्यवहार का मुख्य आश्रम है। अन्तिम तत्व अन्तर्विवेक है। बटलर का मानना है कि इसके अस्तित्व की कोई व्यक्ति अवहेलना नहीं कर सकता। यदि व्यक्ति दो कर्म करता है। पहला यह कि, वह असहाय की सहायता करता है और दूसरा, बिना किसी कारण किसी को नुकसान पहुंचाता है तो स्वयं ही पहले कर्म का अनुमोदन तथा दूसरे कर्म का अननुमोदन करेगा। परोपकार एवं आत्मप्रेम में होने वाले संघर्ष का निर्णय अन्तर्विवेक करता है। बटलर ने अन्तर्विवेक को इस रूप में परिभाषित किया जिसका उल्लेख विलियम डोनाल्ड हडसन अपनी पुस्तक में करते हैं, "... there is a superior principle of reflection or conscience in every man, which distinguishes between the internal principle of his heart, as well as external action; which passes judgement upon himself and them; pronounces determinately some actions to be in themselves just, right, good; others to be in themselves evil, wrong, unjust.."[8]। अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति के अंतर्गत एक उच्च सिद्धान्त के रूप में अन्तर्विवेक विद्यमान है जो उसके आंतरिक तथा बाह्य कर्मों का मूल्यायन करता है। अन्तर्विवेक ही कुछ कर्मों को स्वतः उचित और शुभ बताता है तथा अन्य कर्मों को स्वतः अनुचित और अशुभ बताता है। यह स्वतः प्रमाणित सत्य है और इसके प्रमाण के लिए इन्द्रियानुभव तथा तार्किक प्रमाण अनावश्यक है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि नैतिक अन्तःप्रज्ञावाद का उदय सत्रहवीं शताब्दी में हुआ परंतु विभिन्न युगों में इसके समर्थकों ने भिन्न-भिन्न रूप में इस सिद्धांत के स्वरूप का निरूपण किया है। शास्त्रीय युग में बौद्धिक अन्तःप्रज्ञावाद तथा नैतिक इन्द्रियवाद का समान प्रभाव रहा है। वहीं इन सिद्धांतों की कमियों को उजागर कर इन दोनों सिद्धांतों में सामान्य बातों को समान महत्व देने वाले अन्तर्विवेक सिद्धांत का भी पर्याप्त महत्व दिखा। वहीं आधुनिक में कुछ चिंतकों ने बौद्धिक अन्तःप्रज्ञावाद का समर्थन विशिष्ट ढंग से किया। समकालीन युग में पुनः कुछ चिंतकों ने बौद्धिकता तो कुछ भावनाओं को महत्व दिया।

**नैतिक अन्तःप्रज्ञावाद के प्रमुख प्रकारों की समीक्षा**

यद्यपि नीतिशास्त्र के क्षेत्र में अन्तःप्रज्ञावाद एक जीवंत विचारधारा परंतु विभिन्न चिन्तकों ने इस सिद्धांत की आलोचना की है। यदि हम बौद्धिक अन्तःप्रज्ञावाद पर विचार करें तो इस सिद्धांत की कमी यह है कि इस सिद्धांत के समर्थकों ने बौद्धिक एवं नैतिक प्रत्यय को एक समान मान लिया है जबकि वास्तविकता यह है कि इन दोनों का एक-दूसरे से कोई संबंध नहीं है क्योंकि बौद्धिक प्रत्ययों का संबंध गणित एवं विज्ञान के प्रत्ययों से है जो निश्चित रूप से सभी देश एवं काल में एक स्वरूप हैं जबकि नैतिक प्रत्ययों के संबंध में ऐसा नहीं जा सकता है कि वे सब समय एक ही स्वरूप के होंगे। इसी कारण इस सिद्धांत की आलोचना करते हुए ज्योफरे जेम्स वॉरनाक ने कहा कि, "It is rather that the theory, appraised as a contribution to philosophy, seems deliberately, almost perversely, to answer no questions, to thrown no light on any problem."[9]। अर्थात् इस सिद्धांत को दर्शनशास्त्र में महत्वपूर्ण योगदान के रूप में आंका गया परंतु ऐसा प्रतीत होता है कि यह सिद्धांत न तो किसी प्रश्न का कोई उत्तर देता है और न ही समस्या का समाधान करता है।

नैतिक इन्द्रियवाद या संवृत्तिवाद भी दोषों से मुक्त नहीं है। इस सिद्धांत की सर्वप्रमुख आपत्ति यह है कि इस सिद्धांत के समर्थकों ने नैतिक निर्णय को मुख्य रूप से संवेदनात्मक या भावनात्मक माना है। यह सत्य है कि जब हम कोई निर्णय करते हैं तो साथ ही अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त भी करते हैं। किंतु कोई भी निर्णय हो उसमें बुद्धि की भूमिका को अस्वीकार नहीं जा सकता। इसके अलावा नैतिक इन्द्रियवादी जिस इन्द्रिय के आधार पर नैतिक सत्यों को जानने का दावा करते हैं वह वैज्ञानिक क्षेत्र से बाहर प्रतीत होती है। इस कारण ऐसा जान पड़ता है कि यह एक रहस्यमय शक्ति है। डेविड मैक्नॉटन इस सिद्धान्त की आलोचना करते हुए कहते हैं कि, "that it invokes a weird faculty of moral awareness, unknown to science."[10]। अर्थात् यह नैतिक बोध के लिए एक विचित्र शक्ति का आह्वान करती है जो विज्ञान के विरुद्ध है। इस प्रकार जिस शक्ति का अस्तित्व ही रहस्यमय हो उसके आधार पर नैतिक या कोई अन्य ज्ञान का दावा करना कहाँ तक युक्तिसंगत प्रतीत होता है।

बटलर के अन्तर्विवेक सिद्धांत की समीक्षा करते हुए कहा जा सकता है कि यद्यपि बटलर का सिद्धांत पूर्ववर्ती सिद्धांतों की अपेक्षा अधिक युक्तिसंगत हैं तथापि उनके सिद्धांतों में भी कुछ दोष अवश्य दिखाई पड़ते हैं। बटलर के विचार की एक महत्वपूर्ण आपत्ति यह है कि यदि हम सब में अन्तर्विवेक नामक नैतिक शक्ति विद्यमान है जो हमें विभिन्न परिस्थितियों में उचित-अनुचित निर्णयों का ज्ञान करवाती है तो नैतिक निर्णय के विषय में इतनी विविधता क्यों है? क्यों हमारे नैतिक निर्णय व्यक्तिगत रूप से भिन्न होते हैं? इसी कारण विलियम वीवेल ने कहा, "if conscience be the supreme judge of right and wrong, whose conscience

is to be taken."[11]। अर्थात् यदि अन्तर्विवेक उचित-अनुचित का निर्णय करता है तो किस व्यक्ति का अन्तर्विवेक निर्णयकर्ता के रूप में माना जाएगा? इसके अलावा बटलर ने जिस अन्तर्विवेक शब्द का प्रयोग किया है वो बहुत सीमा तक बौद्धिक शक्ति के अनुरूप ही लगता है।

**निष्कर्ष**

इस प्रकार स्पष्ट है कि अन्तःप्रज्ञा के स्वरूप के विषय में मतभेद के कारण इसके कई प्रकार हो गये हैं। उपरोक्त समीक्षा के आधार पर यह कहा जा सकता है अन्तःप्रज्ञावाद का कोई भी प्रकार दोषों से मुक्त नहीं है। यदि हम अन्तःप्रज्ञा को व्यक्ति की केवल बौद्धिक शक्ति माने तो इस सिद्धांत में कुछ कठोरता प्रतीत होती है क्योंकि कोई भी निर्णय हो उसमें भावनाओं एवं संवेदनाओं का महत्व अवश्य होता है। उसी प्रकार यदि हम केवल भावनाओं के आधार पर निर्णय करे तो निश्चिय ही हमारे निर्णय पक्षपातपूर्ण होंगे। इस दृष्टिकोण से देखा जाए तो बटलर का सिद्धांत उपरोक्त सिद्धांतों की अपेक्षा अधिक युक्तिसंगत प्रतीत होता है क्योंकि उन्होंने केवल बुद्धि या केवल भावना के आधार पर नैतिक सत्य को जानने का दावा नहीं किया है। बटलर ने' अन्तर्विवेक को बुद्धि व इन्द्रिय दोनों शक्ति के रूप में माना है। परन्तु यह बात केवल अन्तर्विवेक की परिभाषा तक ही सीमित दिखाई पड़ती है। मेरे विचार में यह सत्य है कि इन सिद्धांतों में अवश्य ही कुछ बाते समर्थनीय है परंतु पूर्ण रूप से किसी भी सिद्धांत का समर्थन करना उचित नहीं जाना पड़ता। अतः निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि अन्तःप्रज्ञा का अस्तित्व अवश्य है परंतु इसके स्वरूप के विषय में विविधता के कारण निश्चित रूप से कुछ कहना समिचीन ही नहीं जान पड़ता है।

**सन्दर्भ ग्रन्थ सूची**

1. *https://plato.stanford.edu/entries/intuitionism-ethics/*
2. *Hudson, W. D. (1967). Ethical Intuitionism. New York: ST. Martin's Press, p. 23.*
3. *Cudworth, R. (1996). A Treatise Concerning Eternal and immutable Morality with a Treatise of Freewill. Sarah Hutton.(Ed.). Cambridge: Cambridge University Press, p. 58.*
4. *Ross. W. D. (2002).The Right and the Good. Philip Stratton-Lake. Oxford: Oxford University Press p. 30.*
5. *Kappel, K. (2002). Challenges to Audi's Ethical Intuitionism. In Ethical Theory and Moral Practices. Vol. 5. No. 4, p. 3.*
6. *Hudson, W. D. (1967). Ethical intuitionism.op. cit. pp. 18-19*
7. *Roeser, S. (2005). A Particular Epistemology: Affectual Intuitionism. Acta Analytica , Vol. 21. No. 1, p. 43.*
8. *Hudson, W. D. (1967). Ethical intuitionism. op. cit, p. 29.*
9. *Warnock, G. J. (1967). Contemporary Moral Philosophy. London: MacMillan, pp. 12-13.*
10. *Ogar, J. N. (2016). A Critique of Ethical Intuitionism as the Foundation of Knowledge. African Educational Research Journal. Vol. 4. No. 1, p. 9.*
11. *Butler, J. (1848). Butler's Three Sermons on Human Nature and Dissertation on Virtue. William Whewell. (Ed.). Cambridge: Daightons, p. Xiv.*